CHETANA
International Journal of Education (CIJE)

Peer Reviewed/Refereed Journal
ISSN : 2455-8279 (E)/2231-3613 (P)

Impact Factor
SJIF 2026-8.584



Prof. A.P. Sharma
Founder Editor, CIJE
(25.12.1932 - 09.01.2019)

सर अलेक्जेंडर कनिंघम: भारतीय पुरातत्व के जनक और ऐतिहासिक पुनर्निर्माण में उनका योगदान

डॉ. अनुपमा गोदारा
सहायक आचार्य (इतिहास)
राजकीय कन्या महाविद्यालय, विद्याधर नगर जयपुर
Email- dranupamagodara76@gmail.com, Mob – 0000000000

First draft received: 19.08.2026, Reviewed: 26.08.2026
Final proof received: 29.08.2026, Accepted: 29.09.2026

सारांश

उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक भारत का प्राचीन इतिहास मुख्य रूप से मिथकों, किंवदंतियों और अस्पष्ट साहित्यिक स्रोतों के अंधकार में लिपटा हुआ था। इस अंधकार को दूर कर भारतीय इतिहास को एक ठोस, वैज्ञानिक और पुरातात्विक आधार प्रदान करने का श्रेय सर अलेक्जेंडर कनिंघम को जाता है। प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के संस्थापक और प्रथम महानिदेशक सर अलेक्जेंडर कनिंघम के जीवन, उनकी कार्यप्रणाली और भारतीय पुरातत्व में उनके युगान्तकारी योगदान का आलोचनात्मक मूल्यांकन करता है। इस अध्ययन में यह विश्लेषण किया गया है कि कैसे उन्होंने चीनी यात्रियों (विशेषकर ह्वेनसांग और फाह्यान) के यात्रा वृत्तांतों का उपयोग करते हुए प्राचीन भारतीय नगरों, विशेष रूप से बौद्ध स्थलों की खोज की। सांची, सारनाथ, भरहुत और तक्षशिला जैसे स्थलों के उनके उत्खनन और प्रलेखन ने भारतीय इतिहास की समय-रेखा को फिर से परिभाषित किया। यद्यपि आधुनिक पुरातात्विक मानकों, जैसे कि स्तर-विन्यास की दृष्टि से उनकी विधियों की आलोचना की जाती है, फिर भी पुरालेख शास्त्र और मुद्राशास्त्र के क्षेत्र में उनके द्वारा स्थापित प्रतिमान उन्हें निर्विवाद रूप से 'भारतीय पुरातत्व का जनक' सिद्ध करते हैं।

मुख्य शब्द - *सर अलेक्जेंडर कनिंघम, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, बौद्ध स्थल, ह्वेनसांग, भरहुत, मुद्राशास्त्र, पुरालेख शास्त्र, ऐतिहासिक भूगोल।*

प्रस्तावना

भारतीय इतिहास के अध्ययन में 19वीं शताब्दी एक संधिकाल थी। एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल की स्थापना (1784) के साथ सर विलियम जोंस ने भारत के साहित्यिक और भाषाई अध्ययन की शुरुआत की थी, लेकिन यह अध्ययन मुख्यतः ग्रंथों और पांडुलिपियों तक सीमित था।[1] भौतिक अवशेषों, खंडहरों और स्मारकों के वैज्ञानिक अध्ययन की दिशा में कोई व्यवस्थित प्रयास नहीं हुआ था। 1837 में जब जेम्स प्रिंसेप ने ब्राह्मी लिपि को पढ़ने में सफलता प्राप्त की, तो प्राचीन भारत के ऐतिहासिक अध्ययन का एक नया मार्ग प्रशस्त हुआ।[2] इसी बौद्धिक वातावरण में एक युवा ब्रिटिश सैन्य अधिकारी, अलेक्जेंडर कनिंघम ने भारत की धरती पर कदम रखा।

कनिंघम ने यह महसूस किया कि केवल साहित्यिक ग्रंथों के आधार पर भारत के प्राचीन इतिहास का सटीक पुनर्निर्माण संभव नहीं है। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि प्राचीन खंडहरों, सिक्कों, और शिलालेखों का व्यवस्थित सर्वेक्षण किया जाना चाहिए। प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य कनिंघम के इन्हीं प्रयासों का दस्तावेजीकरण करना और यह सिद्ध करना है कि उन्हें 'भारतीय पुरातत्व का जनक' क्यों कहा जाता है। यह शोध पत्र उनकी सर्वेक्षण पद्धतियों, उनकी प्रमुख खोजों, और उनके कार्यों की समकालीन आलोचनाओं का समग्र विश्लेषण करेगा।

प्रारंभिक जीवन और पुरातात्विक रुचि का उदय

सर अलेक्जेंडर कनिंघम का जन्म 23 जनवरी 1814 को लंदन में हुआ था। वे स्कॉटिश कवि एलन कनिंघम के पुत्र थे। 1831 में मात्र 17 वर्ष की आयु में वे ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना में 'बंगाल इंजीनियर्स' के कैडेट के रूप में भारत आए।[3] एक सैन्य इंजीनियर के रूप में उनका मुख्य कार्य सैन्य और नागरिक निर्माण कार्यों की देखरेख करना था, लेकिन उनकी गहरी रुचि भारत के प्राचीन अतीत में थी।

भारत में उनके प्रारंभिक वर्षों के दौरान उनकी मुलाकात जेम्स प्रिंसेप से हुई, जो उस समय एशियाटिक सोसाइटी के सचिव थे और प्राचीन भारतीय लिपियों और सिक्कों पर शोध कर रहे थे। प्रिंसेप के सान्निध्य ने कनिंघम के भीतर पुरातत्व और मुद्राशास्त्र के प्रति एक स्थायी जुनून पैदा कर दिया। कनिंघम ने प्रिंसेप को ब्राह्मी लिपि के अध्ययन और प्राचीन सिक्कों के वर्गीकरण में सहायता की।

1837 में कनिंघम ने सारनाथ में अपना पहला स्वतंत्र उत्खनन कार्य किया। यद्यपि उनके पास आधुनिक पुरातात्विक तकनीकों का ज्ञान नहीं था, फिर भी एक इंजीनियर के रूप में उनकी माप, रेखांकन और मानचित्रण की क्षमता ने उनके पुरातात्विक कार्यों को अत्यधिक व्यवस्थित बना दिया। 1851 में उन्होंने लेफ्टिनेंट एफ. सी. मैसी के साथ मिलकर मध्य प्रदेश में सांची और उसके आसपास के बौद्ध स्तूपों का सर्वेक्षण और उत्खनन किया, जिसका परिणाम 1854 में प्रकाशित

उनकी प्रसिद्ध पुस्तक **"द भिलसा टोप्स"** के रूप में सामने आया। यह पुस्तक भारतीय बौद्ध वास्तुकला और इतिहास पर पहली व्यवस्थित कृतियों में से एक थी।

भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की स्थापना में भूमिका

कनिंघम का सबसे बड़ा संस्थागत योगदान भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की स्थापना है। 1860 के दशक से पहले, भारत में स्मारकों का संरक्षण या पुरातात्विक सर्वेक्षण पूरी तरह से व्यक्तिगत रुचि या स्थानीय प्रशासकों की सनक पर निर्भर था। कनिंघम ने इस बिखराव को देखा और ब्रिटिश सरकार को एक केंद्रीय पुरातात्विक संस्था के निर्माण के लिए राजी करने का बीड़ा उठाया।

नवंबर 1861 में, कनिंघम ने भारत के तत्कालीन वायसराय लॉर्ड कैनिंग को एक विस्तृत ज्ञापन सौंपा। इस ज्ञापन में उन्होंने तर्क दिया कि भारत के प्राचीन स्मारकों का व्यवस्थित सर्वेक्षण न केवल अकादमिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह ब्रिटिश साम्राज्य का नैतिक कर्तव्य भी है। उन्होंने लिखा कि यह एक ऐतिहासिक घटना होगी यदि ब्रिटिश सरकार इन स्मारकों को नष्ट होने के लिए छोड़ दे।

लॉर्ड कैनिंग उनके तर्कों से सहमत हुए और 1861 में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण की स्थापना की गई। कनिंघम को इसके प्रथम 'आर्कियोलॉजिकल सर्वेयर' के रूप में नियुक्त किया गया। यह सर्वेक्षण कार्य 1861 से 1865 तक चला, लेकिन वित्तीय कारणों से इसे 1865 में निलंबित कर दिया गया। 1870 में, लॉर्ड मेयो के शासनकाल में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण को स्थायी रूप से पुनर्जीवित किया गया और 1871 में कनिंघम को प्रथम महानिदेशक के रूप में वापस बुलाया गया। वे 1885 तक इस पद पर रहे। इस दौरान उन्होंने भारत के पुरातत्व को एक व्यक्तिगत शौक से निकालकर एक पेशेवर सरकारी विभाग में बदल दिया।

कार्यप्रणाली और सर्वेक्षण दृष्टिकोण

अलेक्जेंडर कनिंघम की कार्यप्रणाली उनके समय के हिसाब से अत्यंत नवीन थी। उनकी पुरातात्विक पद्धति का सबसे मजबूत आधार साहित्यिक और भौगोलिक समन्वय था।

चीनी यात्रियों के वृत्तांतों का उपयोग

कनिंघम की सबसे बड़ी सफलता यह थी कि उन्होंने फाह्यान और ह्वेनसांग जैसे चीनी बौद्ध यात्रियों के यात्रा वृत्तांतों को अपने अन्वेषण का आधार बनाया। ह्वेनसांग, जो 7वीं शताब्दी में भारत आए थे, ने अपनी पुस्तक **"सी-यू-की"** में भारत के विभिन्न नगरों, बौद्ध मठों, दूरियों और दिशाओं का अत्यंत सटीक विवरण दिया था। कनिंघम ने ह्वेनसांग के यात्रा मार्ग को एक नक्शे पर उतारा और उत्तर भारत के मैदानी इलाकों में उन स्थानों की भौतिक रूप से खोज शुरू की।

इस विधि का उपयोग करते हुए, कनिंघम ने श्रावस्ती, कौशांबी, कुशीनगर, वैशाली, और तक्षशिला जैसे खोए हुए प्राचीन नगरों की सटीक पहचान की। उनकी 1871 की पुस्तक, **"द एंशिएंट ज्योग्राफी ऑफ इंडिया"** इसी पद्धति का परिणाम है, जो आज भी ऐतिहासिक भूगोल के शोधकर्ताओं के लिए एक मानक संदर्भ मानी जाती है।[12]

क्षेत्रीय सर्वेक्षण और रिपोर्टिंग

कनिंघम ने पूरे उत्तर और मध्य भारत में व्यापक पैदल और घुड़सवारी यात्राएं कीं। उन्होंने जो कुछ भी देखा, उसकी विस्तृत माप ली, रेखाचित्र बनाए और योजनाएँ तैयार कीं। उन्होंने अपने सर्वेक्षणों को 23 खंडों की एक शृंखला में प्रकाशित किया, जिसे **"कनिंघम की रिपोर्ट"** कहा जाता है। ये रिपोर्ट्स आज भी उन स्मारकों की स्थिति को समझने के लिए सबसे प्रामाणिक प्राथमिक स्रोत हैं, जिनमें से कई समय के साथ या मानवीय अतिक्रमण के कारण नष्ट हो चुके हैं।

प्रमुख पुरातात्विक खोजें और उत्खनन

कनिंघम का ध्यान मुख्य रूप से बौद्ध स्थलों पर केंद्रित था, क्योंकि उस समय यूरोपीय विद्वानों का मानना था कि बौद्ध धर्म भारत का सबसे प्राचीन और महत्वपूर्ण ऐतिहासिक चरण था। उनके द्वारा किए गए कुछ प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं:

भरहुत स्तूप की खोज और संरक्षण

1873 में मध्य प्रदेश के सतना जिले में कनिंघम ने भरहुत स्तूप के खंडहरों की खोज की। जब उन्होंने इसे देखा, तब तक स्थानीय लोग स्तूप की ईंटों और पत्थरों का उपयोग अपने घर बनाने के लिए कर रहे थे। कनिंघम ने तुरंत हस्तक्षेप किया और इस अमूल्य बौद्ध स्मारक के बचे हुए हिस्सों, विशेषकर नक्काशीदार तोरणद्वारों और रेलिंग को बचाया। उन्होंने इन भारी पत्थरों को कलकत्ता के भारतीय संग्रहालय में स्थानांतरित करवाया। भरहुत की मूर्तियाँ शुंग कालीन कला (दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व) का सबसे उत्कृष्ट उदाहरण हैं। 1879 में उन्होंने **"द स्तूप ऑफ भरहुत"** नामक एक महत्वपूर्ण पुस्तक प्रकाशित की।

महाबोधि मंदिर, बोधगया

बोधगया में स्थित महाबोधि मंदिर, जहां महात्मा बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ था, 19वीं सदी तक खंडहर में तब्दील हो चुका था। कनिंघम ने 1870 के दशक में इस मंदिर का विस्तृत सर्वेक्षण किया और बाद में ब्रिटिश सरकार और बर्मा के राजा की सहायता से इसके जीर्णोद्धार का कार्य किया। कनिंघम के सावधानीपूर्वक तैयार किए गए रेखाचित्रों और सर्वेक्षण के आधार पर ही मंदिर को उसके वर्तमान स्वरूप में पुनर्निर्मित किया गया।

हड़प्पा और सिंधु घाटी सभ्यता की प्रारंभिक झलक

कनिंघम की एक विडंबनापूर्ण लेकिन महत्वपूर्ण खोज हड़प्पा से जुड़ी थी। 1853 और 1873 में उन्होंने पंजाब प्रांत (अब पाकिस्तान) में स्थित हड़प्पा के टीलों का दौरा किया। वहां उन्होंने एक अद्वितीय मुहर प्राप्त की, जिस पर एक सांड का चित्र और कुछ अज्ञात लिपि खुदी हुई थी। कनिंघम ने इसे अपनी रिपोर्ट में प्रकाशित किया, लेकिन वे इसकी वास्तविक प्राचीनता को नहीं समझ सके। उनका मानना था कि यह भारत के बाहर से आई कोई मुहर है। यद्यपि कनिंघम सिंधु घाटी सभ्यता की खोज का श्रेय नहीं ले सके, लेकिन हड़प्पाई मुहर का पहला दस्तावेजीकरण करने का श्रेय उन्हीं को जाता है। इसी दस्तावेजीकरण ने बाद में जॉन मार्शल और दयाराम साहनी को प्रेरित किया।

मुद्राशास्त्र और पुरालेख शास्त्र में योगदान

पुरातत्व के अलावा, कनिंघम एक विश्वरूपी मुद्राशास्त्री थे। प्राचीन सिक्कों के माध्यम से इतिहास के पुनर्निर्माण में उनके योगदान की तुलना किसी अन्य विद्वान से नहीं की जा सकती।

प्राचीन भारतीय सिक्के

कनिंघम ने अपने जीवनकाल में लगभग 8,000 प्राचीन सिक्कों का एक विशाल निजी संग्रह तैयार किया था। उन्होंने इंडो-ग्रीक, कुषाण, गुप्त, और पंचमार्क सिक्कों का गहन अध्ययन किया। उनकी पुस्तकें, जैसे **"कॉइन्स ऑफ एंशिएंट इंडिया"**, आज भी मुद्राशास्त्र के क्षेत्र में मानक संदर्भ ग्रंथ मानी जाती हैं।[23] उन्होंने सिक्कों के आधार पर ही कई अज्ञात इंडो-ग्रीक और शक शासकों के नामों और उनके शासनकाल का कालक्रम तय किया।

अशोक के शिलालेख और 'कॉर्पस इन्स्क्रिप्शनम इंडिकेरम'

शिलालेखों के व्यवस्थित प्रकाशन के लिए कनिंघम ने **'कॉर्पस इन्स्क्रिप्शनम इंडिकेरम'** नामक एक महत्वाकांक्षी परियोजना की शुरुआत की। 1877 में प्रकाशित इसके पहले खंड में उन्होंने सम्राट अशोक के सभी ज्ञात शिलालेखों और स्तंभ लेखों को एक साथ संकलित किया। इसके माध्यम से भारतीय इतिहास की पहली प्रामाणिक तिथि (तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व) को दृढ़ता से स्थापित किया गया।

कनिंघम की कार्यप्रणाली की आलोचना और सीमाएं

एक अग्रणी पुराविद् होने के बावजूद, कनिंघम की कार्यप्रणाली आधुनिक पुरातत्व के मानकों पर कई मोर्चों पर आलोचित होती है:

1. **ग्रंथ-आधारित पुरातत्व :** कनिंघम की सबसे बड़ी आलोचना यह है कि उनका दृष्टिकोण पूरी तरह से ग्रंथों (विशेषकर चीनी यात्रियों के वृत्तांतों) पर निर्भर था। वे केवल उन्हीं स्थलों को खोज रहे थे जिनका उल्लेख ह्वेनसांग ने किया था। इस कारण वे उन स्थलों को नजरअंदाज कर गए जिसका कोई साहित्यिक उल्लेख नहीं था।
2. **स्तर-विन्यास की उपेक्षा:** कनिंघम एक इंजीनियर थे, प्रशिक्षित पुरातत्वविद् नहीं। उनकी खुदाई की विधि अक्सर लंबवत होती थी, जो स्तूप के केंद्र तक पहुंचने के लिए की जाती थी, ताकि अवशेष प्राप्त किए जा सकें। इस प्रक्रिया में उन्होंने परतों के क्रम को नष्ट कर दिया, जो आधुनिक पुरातत्व में समय-निर्धारण का सबसे महत्वपूर्ण आधार है।
3. **बौद्ध स्मारकों पर अत्यधिक ध्यान:** उन्होंने अपने करियर का अधिकांश समय बौद्ध स्थलों की खोज में लगा दिया। इसके परिणामस्वरूप, प्रागैतिहासिक पुरातत्व, पाषाण युग, और मध्यकालीन इस्लामी वास्तुकला की उनके सर्वेक्षणों में काफी हद तक उपेक्षा हुई।

निष्कर्ष

तमाम आलोचनाओं के बावजूद, भारतीय इतिहास और पुरातत्व में अलेक्जेंडर कनिंघम का योगदान ऐतिहासिक है। जब कनिंघम ने भारत में अपना कार्य शुरू किया था, तब भारतीय इतिहास के पास कोई निश्चित कालक्रम नहीं था। उनके 50 वर्षों के अथक प्रयासों ने भारत को एक व्यवस्थित ऐतिहासिक भूगोल, एक मजबूत संस्थागत ढांचा, और अभिलेखों व सिक्कों का एक विशाल संग्रह प्रदान किया।

कनिंघम ने न केवल स्मारकों की खोज की, बल्कि उनके प्रलेखन की एक ऐसी संस्कृति स्थापित की जिसने भविष्य के विद्वानों का मार्गदर्शन किया। सर जॉन मार्शल ने स्वयं स्वीकार किया था कि उनका कार्य पूरी तरह से कनिंघम द्वारा तैयार की गई नींव पर आधारित था। निष्कर्षतः, सर अलेक्जेंडर कनिंघम वह व्यक्ति थे जिन्होंने कुदाल और कलम दोनों का समान कुशलता से उपयोग किया और भारत को उसका भूला हुआ अतीत लौटाया। यही कारण है कि उन्हें अत्यंत सम्मान के साथ **"भारतीय पुरातत्व का जनक"** कहा जाता है।

सन्दर्भ

1. कनिंघम, ए. (1854), The Bhilsa Topes; or, Buddhist Monuments of Central India, स्मिथ, एल्डर एंड कंपनी, लंदन।
2. कनिंघम, ए. (1871), The Ancient Geography of India: The Buddhist Period, ट्रुबनर एंड कंपनी, लंदन।
3. कनिंघम, ए. (1871-1887). Archaeological Survey of India Reports, 1862-1884, कुल 23 खंड। गवर्नमेंट प्रेस, कलकत्ता।
4. कनिंघम, ए. (1877). Corpus Inscriptionum Indicarum, Vol. I: Inscriptions of Asoka, ऑफिस ऑफ द सुपरिंटेंडेंट ऑफ गवर्नमेंट प्रिंटिंग, कलकत्ता।
5. कनिंघम, ए. (1879). The Stupa of Bharhut, डब्ल्यू. एच. एलन एंड कंपनी, लंदन।
6. कनिंघम, ए. (1891). Coins of Ancient India from the Earliest Times Down to the Seventh Century A.D.,बर्नार्ड क्वारिच, लंदन।
7. कनिंघम, ए. (1892). Mahâbodhi, or the Great Buddhist Temple under the Bodhi Tree at Buddha-Gaya, डब्ल्यू. एच. एलन एंड कंपनी, लंदन।
8. इमाम, अबू (1966). Sir Alexander Cunningham and the Beginnings of Indian Archaeology, एशियाटिक सोसाइटी ऑफ पाकिस्तान, ढाका।
9. चक्रवर्ती, डी. के. (1988). A History of Indian Archaeology from the Beginning to 1947, मुंशीराम मनोहरलाल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
10. सिंह, उपिंदर (2004). The Discovery of Ancient India: Early Archaeologists and the Beginnings of Archaeology, परमानेंट ब्लैक, दिल्ली।
11. लाहिरी, नयनजोत (2005). Finding Forgotten Cities: How the Indus Civilization was Discovered, परमानेंट ब्लैक, नई दिल्ली।
12. राय, सौरभ (1961). The Story of Indian Archaeology: 1784-1947, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, नई दिल्ली।
13. गुहा-ठाकुरता, तपती (2004). Monuments, Objects, Histories: Institutions of Art in Colonial and Postcolonial India, कोलंबिया यूनिवर्सिटी, न्यूयॉर्क।
14. थापर, रोमिला (2002). Early India: From the Origins to AD 1300, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।
15. केजरीवाल, ओ. पी. (1988). The Asiatic Society of Bengal and the Discovery of India's Past, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।
16. सेनगुप्ता, गौतम और कौल, शाहनाज (संपा.) (2014). Archaeology in India: Individuals, Ideas and Institutions, सेंटर फॉर आर्कियोलॉजिकल स्टडीज एंड ट्रेनिंग, पूर्वी भारत।